हरियाणवी लोक धारा में साँग परम्परा

डॉ. मनोज कुमार
सहायक प्राध्यापक (हिन्दी विभाग)
सनातन धर्म कॉलेज, अम्बाला छावनी

लोकसाहित्य के मर्मज्ञ विद्वानों ने लोक साहित्य को धरती की सुगंध कहा है सहजता और सम्प्रेष्णीयता लोकसाहित्य के विशेष गुण है। लोक साहित्य में साधारणीकरण की अद्‌भूत क्षमता होती है। जिस प्रकार वन में वृक्ष, वृन्द, वनस्पतियों और लताकुजं उत्पन्न होते है, उसी प्रकार लोकसाहित्य में लोकगीत, लोकनाट्य, लोककथा, लोकगाथा चुटकुले, लोकोक्ति और मुहावरे स्वतः उत्पन्न होते है। साहित्य का समुचा भवन लोकसाहित्य के धरातल पर ही खड़ा है। इसलिए लोक साहित्य का महत्व आज के वैश्वीकरण वैज्ञानिक और तकनीकी युग में निरंतर बढ़ रहा है। भरत की लगभग सभी भाषाएं लोकसाहित्य की दृष्टि से अत्यन्त सम्पन्न है।

हरियाणवी साँग–

साँग अर्थ, परिभाषा –'साँग' शब्द स्वांग का तद्‌भव रूप है,– भेष भरना, रूप भरना या नकल करना। भारतीय समाज में शास्त्रीय और लोकनाट्य परंपरा दोनों रूप साथ–साथ चलते आ रहे है। कश्मीर के भांड़, पाचेर, पंजाब के नक्काल, राजस्थान के ख्याल, उत्तरप्रदेश की नौलकी, तथा रास, बिहार और बंगाल में जात्रा, गुजरात में भवाई तथा रासड़ा, केरल के कथकली, कनार्टक के यक्षगान, महाराष्ट्र के तमाशा, हरियाण में साँग (लोकनाट्य) संगीत, संगीतक आदि नाम प्रचलित है। लोकनाट्य की विशेषता की विशेषता है कि इसमें अभिनय, संवाद, नृत्य, संगीत, गायन, कथा तथा भक्ति व आध्यात्मिकता विषयानुसार सभी तत्वों का समाजस्य है।

हरियाणवी लोकसाहित्य मे साँग साहित्य पर निरन्तर लेखन कार्य हो रहा है। डॉ. दशरथ ओझा ने अपने शोधग्रन्थ में हिन्दी नाट्क उद्‌भव और

विकास में लिखा कि 12–13 वीं शताब्दी में जिस प्रकार अपभ्रंश के कवि अब्दुल रहमान ने सदेशरासक की रचना की, कालंतर मे उसी प्रकार हरियाणा में लोककवि सादुल्ला ने नाना लोकनाटयों और लोकगीतों की रचना करके लोकनाट्य परम्परा के विकास का रास्ता साफ किया इस प्रकार कहा जा सकता है कि 13वीं शताब्दी में साँग की पृष्ठभूमि तैयार हो चूकी थी।

हरियाणा के सुप्रसिद्ध साँगी रामकिशन व्यास भी साँग का प्रांरभ 12वीं शताब्दी से नारनौल निवासी गुजराती ब्राह्मण रामकिशन बिहारी लाल से मानकर हरियाणा में साँग का प्रवर्तक मानते है।

नारनौल का गुजराती ब्राह्मण बिहारी लाल था।
साँग शुरु किया सग बारह सौ छः का साल था।।
नाचै–गावै चेतन चेला करै कमाल था।
सोहनी, सवेया, ठुमरी, सोरण गावै ख्याल था।।

श्री बिहारी लाल के समय में एक साँरगी और एक ढोलक लेकर साँग करने वाले खड़े–खड़े बजाते थे। साँग में एक मर्दाना और एक जनाना बनकर, घाघरी व आंगी पहन कर नाच दिखाते थे। बिहारी लाल के शिष्य चेतन ने अपने गुरु के पश्चात स्वयं साँग किए।

इस्लाम धर्म के कट्र अनुयायी औंरगजेब ने सन् 1658 ई. में सागों पर प्रतिबंध लगा दिया। उसने मुजरों ओर नाच–गाना सभी मनोरंजन की विधाओं को बंद कर दिया। औरगंजेब की मृत्यु के बाद सन् 1709 में साँग को उस समय के सुप्रसिद्ध कवि बाल मुकुन्द ने पुनः प्रारंभ किया।

सतरह सौ नो म्हं बाल मुकुन्द नै साँग फेर छेड़या।
उसके चेले गिरधन ने भी बांध लिया बेड़ा।।
शिव कौर शिष्य बणा जमनानगर के पास कन्हैया रबेड़ा।
चेला बण किसन घाट ने लाया था गेड़ा।
गामा म्हं चौपाल मिलै थी जगह ठिकाणे की।
घाघर बीच की धरती हरि समाणे की।

हरियाणा के साँग सम्राट पं. मांगेराम ने एक रागनी में साँग–परम्परा, अभिनय–कौशल, वेश–विन्यास, मंच–विधान एवं वाधों का वर्णन इस प्रकार किया है–

हरियाणा की कहाणी सुणल्यों दो सौ साल की।
कई किस्म की हवा चालग्यी नई चाल की।
एक ढोलकिया एक सारगिया खड़े रहै थे।
गली और गिलवाड़यां के म्हं बड़े रहै थे।
सब तै पहलम चतराई किशनलाल की।।

सन् 1730 में साँग विद्या के पुरोधा किशन लाल भाट का उद्धोष हुआ उन्होंने अपनी साँग मडंली की स्थापना करके साँग के आधुनिक रूप की नीव डाली। 18वीं शताब्दी का एक ग्रन्थ हीरादास उदासी का साँग, 'राजा रत्नसेन का साँग' प्राप्त हुआ है। 19 वीं शताब्दी के उतरार्द्ध में हरियाण की साँग कला को अलीबक्श की प्रतिमा का सम्बल मिला। इसके साँगों की धूम हरियाणा व राजस्थान में खूब मची। 20वीं शताब्दी में हरियाणा में साँग–विद्या को श्री दीपचन्द, श्री नेतराम, श्री राम लाल, श्री सरूपचंद, श्री हरदेवा, श्री बाजेभगत, श्री सूरजभान वर्मा, पं. लख्मीचंद, श्री जमुवामीर, पं. मांगेराम, रामकिशन व्यास, श्री धनपत, श्री चन्दलालवादी, पं. माईचंद, श्री नेकी राम, पं. सुल्लतान आदि सांगियों ने उत्कर्ष तक पहुंचाया।

अलीबख्श एक प्रतिभाशाली कलाकार थे। उनकी कला स्वतः स्फूति थी अपने जीवन काल में उन्होंने भारत के अनेक स्थानों पर साँगों का प्रदर्शन किया। उनके साँगों का क्षेत्र हरियाणा में रेवाड़ी प्रमुखतः रहा। वे स्वयं लिखते हैं कि घटेश्वर महादेव के पास रेवाड़ी के बाजार में प्रतिवर्ष साँग किया करते थे। रेवाड़ी उनका प्रिय स्थान था वे इन पक्तियों के माध्यम से रेवाड़ी की महिमा का गुणगान करते है

रेवाड़ी बना रहे गुलजार।
तमाशा किया बीच बाजार।।

अहमदबख्श 'यानेश्वरी' – यानेश्वरी की साँग परम्परा की अपनी विशिष्टि शैली थी। थानेसर में उन दिनों साँग के दो अखाड़े थे एक नानक चंद अखाड़ा व दूसरा भादर का अखाड़ा। दोनों में कांटे की टक्कर थी। इनके साँगों के प्रदर्शन का उद्धेश्य केवल मनोरंजन था, धन कमाना नही। अहमदबख्श भादर अखाड़े का कलाकार था। अहमदबख्श के साँग इस प्रकार है – थानेसरी रामायण, जयमल–फत्ता, गूगा चौहान, सोरब पदमिनी, चन्द्रकिरण, नवलदे और कृष्ण लीला आदि। थानेसरी के साँगों में धार्मिक

और सांस्कृतिक पूट रहता था। अधिकाशं साँग भक्ति प्रधान थे। श्रृंगारी नही थे। ये अनेक शास्त्रों के ज्ञाता थे और ज्योतिष शास्त्र के विशेषज्ञ थे।

पंडित मांगेराम – पं. लख्मीचंद के शिष्यों में पं. मांगेराम बहुत प्रसिद्ध हुए, जिन्होंने गुरू महिमा, राष्ट्रीय–चेतना, समसामयिक घटनाओं का चित्रण तथा धार्मिक क्षेत्र का भी चित्रण किया है। वे एक सजग कलाकार थे उन्होंने एक और जहां आर्थिक विषमाओं से जुझते मजदूर–किसानों का चित्रण किया है, वही दूसरी और शहरी चकाचौंध में डूबे पश्चिमी सभ्यता और अग्रेंजीयत का दम भरने वाले तथाकथित सभ्यता भिमानियों पर भी करारे व्यंग्य किए है। भारत के प्रथम प्रधांनमत्री पं. जवाहर लाल नेहरू ने भी उनके साँग देखे और उनकी प्रशंसा की थी।

एक हरियाणवी रागनी जो हरियाणा की शान है, उस रागनी का नाम है तु राजा की राज दुलारी'' ये रागनी हरियाणा के जाने माने रागनी कलाकार श्री पं. मांगेराम ने लिखी, इस रागनी का जलवा सिर्फ हरियाणा में ही नहीं बल्कि पूरे देश में है 2011 में आई बॉलीबुड की हीट फिल्म ''आये लकी आये'' में भी इसको रिलिज किया गया। अब तक इस रागनी पर लगभग 100 से ज्यादा हिंदी, हरियाणी और अन्य भाषा बोलियों में गाने रिलिज हो चुके है।

पं. लख्मीचंद जिन्हे साँग जगत में कवि सूर्य के नाम से विख्यात हुए। यदि उन्हे साँग सम्राट की उपाधि से विभूषित करे तो कोई अतिशयोक्ति नही होगी। इनको गायकी का गंधर्व भी कहा जाता है। पं. लख्मीचंद के गुरु भजनकी मानसिंह थे। पं. लख्मीचंद बड़े उच्चकोटि के कलाकार थे। इन्होंने लगभग 2500 रागणियाँ तथा 1000 लोक धुनों का निर्माण किया। इन्होंने अपने साँगों का वर्गीकरण दो रूपों में किया जा सकता है–एक श्रृंगार एव प्रेम प्रधान, साँग, दूसरे धर्म एवं नीति प्रधान साँग। इनके साँगों रस प्रकार है – नौटंकी, ज्यानीचौर, राजा–भोज, रघवीर–धर्मकार, हीर–रांझा, चन्द्रकिरण, हूर–मेनका, द्रोपदी–चीरहरण, शकुन्तला, कीचक वध विराट–पर्व, जमाल, गोविचंद–भरथरी, भूप–पुरजन, राजा हरिश्चन्द्र, पदमावत सत्यवान सावित्रि, नल दमयन्ती, पूरणमल, सरदार चापसिंह, सेठताराचंद मीराबाई।

इनके साँगों का योगदान सामाजिक सुधार, शिक्षा–प्रचार, धर्म और संस्कृति प्रसार और सामाजिक बुराइयों के उन्मूलन में रहा है। समाज में प्रचलित सामाजिक कुप्रथाओं, बाल–विवाह, अनमेल विवाह आदि के

विनाशकारी रूपों के दर्शन इनके साँगों में होते है इन्होंने अपने साँगों में भारत के अतीत का गुणगान किया। उनके साँगों की प्रासंगिकता आज भी ज्यो की त्यों बनी हुई है।

बाजे भगत – ये हरदेवा स्वामी के शिष्य थे, जिससे इन्हे 'भगत' की उपाधि मिली थी। ये बड़े मधुर गायक थे। इनके साँग इस प्रकार है– सकुंतला–दुष्यत, कृष्ण जन्म, गोपीचंद, नल–दयमन्ती, राजा रघवीर–धर्मकौर, महाभारत, आदि पर्व और पदमावत। इनके साँग का प्रदर्शन धन बटोरने के लिए नही होता था बल्कि परोपकार के लिए साँग करते थे, जिसके फलस्वरूप गऊशाला, पाठशाला, कुएँ खुदवाने और गरीब लोगों की कन्याओं के विवाह के लिए इनका धन खर्च होता था। इनकी दानवीरता और प्रभु भक्ति के कारण थे बाजे भगत के नाम से हरियाणा में प्रसिद्ध हुए।

फौजी मेहर सिंह – वे सन 1986 में सेना में भर्ती हुए थे और बाद में आजाद हिंद फौज में भर्ती हो गए। इनके गुरु पं. लख्मीचंद थे। ये नेता जी सुभाषचंद बोस के साथ कंधे से कंधा मिलाकर लड़े। उन्होंने चन्द्रकिरण, हरिश्चन्द्र, सत्यवान–सावित्रि, चापसिंह, शाही लकड़हारा, अजीत सिंह–राजबाला, सेठ ताराचन्द, सरवर नीर, अंजन–पवन, जगदेव बीरमति, हरनंदी का भात, सुभाष चन्द्र बोस आदि साँगों की रचना को रागनी के विकास में फौजी मेहर सिंह का बहुत बड़ा योगदान रहा है।

सहायक ग्रंथ सूची

1. हरियाणवी लोकधारा, स. डा रामपत यादव एवं डॉ. बाबूराम, प्रकाशन विभाग कु.वि.कु. 2004
2. हरियाणवी भाषा और साहित्य, डॉ. बाबूराम, हरियाणा साहित्य अकादमी, पंचकूला 2011
3. हरियाणवी लोकसाहित्य, स. डॉ जयभगवान गोयल, आत्मराज एण्ड संस दिल्ली 2006
4. हरियाणा के साँगों में सौन्दर्य निरूपण, डॉ. विजयेन्द्र सिंह हरियाणा साहित्य अकादमी चण्डीगढ़, 1988।
5. हरियाणा लोक नाट्य परम्परा, डॉ. रघुवीर सिंह, मथाना।